



MP – TET

माध्यमिक शिक्षक पात्रता परीक्षा (वर्ग - 2)

मध्यप्रदेश कर्मचारी चयन मण्डल (MPESB)

भाग - 4

शिक्षाशास्त्र



विषय सूची

क्र.सं.	अध्याय	पृष्ठ सं.
1.	विकास की अवधारणा एवं अधिगम के साथ इसका संबंध	1
2.	विकास को प्रभावित करने वाले कारक	11
3.	बाल विकास के सिद्धांत	14
4.	बालक का मानसिक स्वास्थ्य एवं व्यवहार संबंधी समस्याएँ	16
5.	वंशानुक्रम एवं वातावरण का प्रभाव	23
6.	समाजीकरण प्रक्रियाएँ	29
7.	पियाजे, पावलव, कोहलर और थार्नडाइक : रचना एवं आलोचनात्मक स्वरूप	34
8.	बालकेंद्रित एवं प्रगतिशील शिक्षण की अवधारणा	49
9.	व्यक्तिगत विभिन्नताएँ	53
10.	व्यक्तित्व	60
11.	बुद्धि (Intelligence)	74
12.	भाषा एवं विचार	84
13.	सामाजिक निर्माण के रूप में लिंग और इसकी भूमिका	90
14.	सीखने का मूल्यांकन	94
15.	अधिगमकर्ता का मूल्यांकन	105
16.	समावेशित शिक्षा एवं विविध अधिगमकर्ताओं की समझ	110
17.	अधिगम कठिनाइयों, क्षति आदि से ग्रस्त बच्चों की आवश्यकताओं की पहचान	121
18.	प्रतिभावान, सृजनात्मक, विशेष क्षमता वाले अधिगमकर्ताओं की पहचान	132
19.	समस्याग्रत बालक : पहचान एवं निदानात्मक पक्ष	139
20.	समावेशी बच्चों हेतु निर्देशन एवं परामर्श	145
21.	अधिगम	153
22.	सीखने की क्रिया : बच्चे कैसे सोचते और सीखते हैं	162
23.	शिक्षण और अधिगम की मूलभूत प्रक्रियाएँ	165
24.	छात्र : समस्या समाधानकर्ता और वैज्ञानिक	177
25.	संज्ञान एवं संवेग	182
26.	अभिप्रेरणा	186
27.	अभिक्षमता एवं उसका मापन	195
28.	स्मृति एवं विस्मृति	198

विकास की अवधारणा एवं अधिगम के साथ इसका संबंध

अभिवृद्धि की अवधारणा एवं अर्थ

अभिवृद्धि शब्द अभि + वृद्धि से मिलकर बना है, जिसका अर्थ है – “चारों ओर फैल जाना।”

अभिवृद्धि का सामान्य अर्थ होता है आगे बढ़ना।

बालक की अभिवृद्धि के सन्दर्भ में इसे उसके शरीर के आन्तरिक एवं बाह्य अंगों के आकार, भार और इनकी कार्यक्षमता में होने वाली वृद्धि के रूप में देखा जाता है। मानव शरीर में यह वृद्धि एक आयु तक (18-20 वर्ष) ही होती है, उसके बाद इन अंगों में वृद्धि नहीं होती है अर्थात् इस आयु तक व्यक्ति पूर्ण वयस्क हो जाता है। इस वृद्धि को देखा-परखा जा सकता है और इसका मापन भी किया जा सकता है।

- यह एक क्रमिक प्रक्रिया है जो गर्भावस्था से लेकर परिपक्वता प्राप्त करने तक चलती है।
- अभिवृद्धि में शरीर एवं कोशिकाओं की लम्बाई, भार तथा आकार में वृद्धि होती है।
- यह प्रक्रिया दृश्य और मापन योग्य होती है। इसे देखा, तौला और मापा जा सकता है।
- अभिवृद्धि एक निश्चित काल तक ही होती है – सामान्यतः 18-20 वर्ष की आयु तक।
- मानव शरीर की कार्यक्षमता और अभिवृद्धि की सीमा इसकी दो विशेषताएँ हैं।
- प्रत्येक अवस्था की अपनी विशिष्ट विशेषताएँ होती हैं, जैसे – शिशु अवस्था, बाल्यावस्था, किशोरावस्था आदि।
- अभिवृद्धि के साथ विकास (Development) की प्रक्रिया भी निरंतर चलती रहती है।

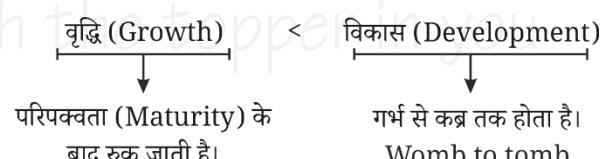
फ्रैंक के अनुसार, "अभिवृद्धि से तात्पर्य कोशिकाओं में होने वाली वृद्धि से होता है, जैसे— लम्बाई और भार में वृद्धि।"

लाल एवं जोशी के अनुसार, "मानव अभिवृद्धि से तात्पर्य उसके शरीर के बाह्य एवं आंतरिक अंगों के आकार, भार एवं कार्यक्षमता में होने वाली उस वृद्धि से है, जो गर्भकाल से परिपक्वता तक चलती है।"

विकास

विकास एक ऐसी प्रक्रिया है जो सतत् चलती है तथा जिसमें गुणात्मक परिवर्तन एवं परिमाणात्मक (मात्रात्मक) परिवर्तन दोनों सम्मिलित होते हैं।

- **गुणात्मक परिवर्तन :** कार्यशैली, कार्यक्षमता
- **परिमाणात्मक परिवर्तन :** लंबाई, वजन एवं आकार
- **सतत् :** सतत् का अर्थ है लगातार चलना अर्थात् पीछे की अवस्था पर पुनः ध्यान नहीं देना।



मुख्य बिंदु:

- विकास की प्रक्रिया में होने वाले सभी परिवर्तन एक जैसे नहीं होते –
 - ✓ प्रारंभिक अवस्था में रचनात्मक परिवर्तन होते हैं जो परिपक्वता लाते हैं।
 - ✓ उत्तरार्द्ध में विनाशात्मक परिवर्तन होते हैं जो व्यक्ति को वृद्धावस्था की ओर ले जाते हैं।
- विकास एक क्रमिक परिवर्तन की शृंखला है, जिससे व्यक्ति में नई विशेषताएँ उत्पन्न होती हैं और पुरानी समाप्त हो जाती हैं।

- प्रौढ़ावस्था में मनुष्य जिन गुणों से सम्पन्न होता है, वे विकास की दीर्घकालिक प्रक्रिया के परिणाम होते हैं।

हरलॉक के अनुसार- विकास केवल अभिवृद्धि तक ही सीमित नहीं है वरन् वह व्यवस्थित तथा समानुगत परिवर्तन है जिसमें कि प्रौढ़ावस्था के लक्ष्य की ओर परिवर्तनों का प्रगतिशील क्रम निहित रहता है, जिसके परिणामस्वरूप व्यक्ति में नवीन विशेषताएँ एवं योग्यताएँ प्रकट होती हैं।

मुनरों के अनुसार- विकास परिवर्तन श्रृंखला की वह अवस्था है जिसमें बच्चा भ्रूणावस्था से लेकर प्रौढ़ावस्था तक गुजरता है, विकास कहलाता है।

जेम्स ड्रेवर के अनुसार - विकास वह दशा है जो प्रगतिशील परिवर्तन के रूप में सतत रूप से व्यक्त होती है। यह प्रगतिशील परिवर्तन किसी भी प्राणी में भ्रूणावस्था से लेकर प्रौढ़ावस्था तक होता है। यह विकास तन्त्र को सामान्य रूप में नियन्त्रित करता है। यह प्रगति का मानदण्ड है और इसका आरम्भ शून्य से होता है।

विकास की विशेषताएँ:

- विकास एक गुणात्मक परिवर्तन है, जिसमें अभिवृद्धि भी शामिल होती है।
- विकास जीवन पर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया है।
- मनोविज्ञान में विकास को क्रमिक परिवर्तनों की प्रक्रिया माना गया है।
- विकास को मापा नहीं, बल्कि अनुभव किया जा सकता है।
- इसमें शारीरिक के साथ-साथ मानसिक परिवर्तन भी होते हैं।
- विकास की गति भिन्न-भिन्न होती है, और यह विभिन्न अवस्थाओं में अलग-अलग दर से होती है।
- इसके कारण व्यक्ति में नवीन विशेषताएँ एवं योग्यताएँ प्रकट होती हैं।
- यह एक व्यापक प्रक्रिया है, जो जीवन काल में होने वाले सभी परिवर्तनों को सम्मिलित करती है।
- विकास वातावरण एवं वंशक्रम दोनों से प्रभावित होता है।
- विकास की दिशा सामान्य से विशिष्ट की ओर होती है।
- विकास में मात्रात्मक एवं गुणात्मक दोनों प्रक्रियाएँ शामिल होती हैं।

अभिवृद्धि एवं विकास में अंतर

क्र.सं.	अभिवृद्धि	विकास
1.	अभिवृद्धि से तात्पर्य मनुष्य के आकार, बनावट एवं भार में होने वाली वृद्धि से है।	विकास से तात्पर्य मानसिक, शारीरिक, सामाजिक एवं चारित्रिक आदि व्यक्तित्वगत परिवर्तनों से होता है।
2.	अभिवृद्धि सीमित होती है तथा परिपक्वता के स्तर तक होती है।	विकास की कोई सीमा नहीं होती है। यह जन्म से लेकर मृत्यु तक चलती रहती है।
3.	अभिवृद्धि केवल मात्रात्मक होती है।	विकास मात्रात्मक एवं गुणात्मक दोनों प्रकार का है।
4.	अभिवृद्धि क्रमानुसार एवं मापन योग्य रूप से होती है।	विकास का कोई क्रम निश्चित नहीं होता।
5.	अभिवृद्धि प्रायः शारीरिक रूप में दृष्टिगोचर होती है।	विकास दृष्ट एवं अदृश्य दोनों रूपों में होता है।
6.	अभिवृद्धि विकास को प्रभावित करती है।	विकास अभिवृद्धि से बहुत कम ही प्रभावित होता है।
7.	अभिवृद्धि केवल धनात्मक होती है।	विकास धनात्मक एवं ऋणात्मक दोनों होता है।
8.	अभिवृद्धि केवल आनुवंशिक प्रभाव के कारण होती है।	विकास पर आनुवंशिकता के साथ ही वातावरण का भी प्रभाव पड़ता है।

नोट : सामान्यतः वृद्धि एवं विकास एक दूसरे के पूरक होते हैं।

विकास के सिद्धान्त

➤ निरन्तरता का सिद्धान्त

- ✓ बालक का विकास गर्भावस्था से लेकर प्रौढ़ावस्था तक निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है।
- ✓ बालक के प्रथम तीन वर्षों में विकास तीव्र गति से होता है जबकि बाद की अवस्था में मंद हो जाता है।

➤ समान प्रतिमान का सिद्धान्त

- ✓ इस सिद्धान्त का प्रतिपादन गैसेल व हरलॉक ने किया।
- ✓ इस सिद्धान्त के अनुसार सभी प्राणियों का विकास अपनी जाति के अनुसार ही होता है।

➤ व्यक्तिगत भिन्नता का सिद्धान्त

- ✓ इस सिद्धान्त के अनुसार बालकों का विकास एक क्रम में होता है लेकिन उनके विकास में व्यक्तिगत भिन्नता होती है।

➤ विकास की विभिन्न गति का सिद्धान्त

- ✓ विभिन्न व्यक्तियों के विकास की गति में भिन्नता होती है जो सम्पूर्ण जीवन भर चलती है।

➤ विकास क्रम का सिद्धान्त

- ✓ बालक का विकास एक निश्चित क्रम में होता है।
- ✓ जैसे- शैशवावस्था → बाल्यावस्था → किशोरावस्था → युवावस्था → प्रौढ़ावस्था आदि

➤ एकीकरण का सिद्धान्त

- ✓ बालकों का विकास पहले सम्पूर्ण अंगों का विकास होता है उसके बाद अंगों के भागों का विकास होता है। उसके बाद सभी अंगों का एकीकरण होता है।

➤ सामान्य व विशिष्ट प्रतिक्रियाओं का सिद्धान्त

- ✓ इस सिद्धान्त के अनुसार बालक का विकास सामान्य प्रतिक्रियाओं से विशिष्ट प्रतिक्रियाओं की ओर होता है।

➤ वंशानुक्रम एवं वातावरण की अन्तः क्रिया का सिद्धान्त

- ✓ बालक का विकास वंशानुक्रम एवं वातावरण दोनों की अन्तः क्रिया का फल है।

➤ परस्पर संबंध का सिद्धान्त

- ✓ बालक के शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक आदि सभी भागों का विकास एक-दूसरे पर निर्भर करता है।

➤ विकास की दिशा का सिद्धान्त

- ✓ बालक का विकास सिर से पैर की ओर होता है। इसके सीरोपुच्छीय सिद्धान्त भी कहते हैं।

➤ केन्द्रोभिमुखी विकास

- ✓ बालक का विकास केन्द्र से बाहर की ओर होता है।

➤ वर्तुलाकार विकास का सिद्धान्त

- ✓ बालक का विकास एक वर्त की तरह होता है। इसे चक्रीय विकास का सिद्धान्त भी कहते हैं।

बाल विकास

➤ बाल मनोविज्ञान में बालक का जन्म से लेकर किशोरावस्था तक अध्ययन किया जाता है।

➤ बाल विकास में बालक का गर्भावस्था से लेकर प्रौढ़ावस्था तक अध्ययन किया जाता है। इसी कारण बाल मनोविज्ञान को बाल विकास कहा जाने लगा।

बाल विकास का संक्षिप्त इतिहास

➤ बाल मनोविज्ञान को बाल विकास इसलिए कहा जाने लगा कि उसमें एक पक्ष के अध्ययन की बजाय सभी पक्षों का अध्ययन किया जाता है।

➤ सर्वप्रथम 1629 ई. में कॉमेनियस ने 'School of Infancy' की स्थापना कर बाल विकास का अध्ययन शुरू किया।

- पेस्टोलॉजी ने बाल मनोविज्ञान पर वैज्ञानिक अध्ययन किया तथा अपने साथे तीन वर्षीय बेटे पर प्रयोग किये तथा **Baby Biography** की रचना की।
- प्रेरण ने बालकों पर **Mind of Child** नामक पुस्तक की रचना की।
- 19वीं शताब्दी में स्टेनले हॉल ने **Child Study Society** एवं **Child Welfare Organization** नामक संस्थाओं की स्थापना अमेरिका में की।
- स्टेनले हॉल को बाल मनोविज्ञान का जनक माना जाता है।
- टैने ने 1869 ई. में **Infant Child Development** नामक पुस्तक की रचना की।
- भारत में बाल विकास अध्ययन 1930 ई. में कलकत्ता विश्वविद्यालय में ताराबाई मोडेक के प्रयासों से किया गया।

परिभाषाएँ :-

क्रो एंड क्रो, "बाल मनोविज्ञान एक वैज्ञानिक अध्ययन है जिसमें बालक गर्भावस्था से लेकर किशोरावस्था तक अध्ययन किया जाता है।"

बर्क, "बाल विकास मनोविज्ञान की वह शाखा है जिसमें जन्म पूर्व अवस्था से परिपक्व अवस्था तक होने वाले सभी परिवर्तनों को स्पष्ट किया जाता है।"

जेम्स ड्रेवर "जन्म से परिपक्वता तक विकसित हो रहे मानव का अध्ययन किया जाता है।"

आइनजेक "बाल मनोविज्ञान का संबंध बालक में मनोवैज्ञानिक प्रक्रियाओं के विकास से है इससे गर्भकालीन, जन्म, शैशावस्था, बाल्यावस्था, किशोरावस्था और परिपक्वता तक बालक की विकास प्रतिक्रियाओं का अध्ययन किया जाता है।"

बाल विकास की आवश्यकताएँ

- बालकों की मनोरचना की जानकारी प्राप्त करने हेतु : बालकों की मानसिक स्थिति, रुचियाँ, क्षमताएँ एवं समस्याओं को समझने के लिए बाल विकास का अध्ययन आवश्यक है।
- बाल विकास की प्रक्रिया को समझने के लिए : जन्म से लेकर वयस्कता तक बालक के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक और संवेगात्मक परिवर्तनों की समझ के लिए यह अनिवार्य है।
- बाल निर्देशन व परामर्श में सहायक : सही दिशा-निर्देश एवं परामर्श देने के लिए बालक की अवस्था व विकास स्तर की जानकारी आवश्यक होती है।
- बालकों के प्रति भविष्यवाणी करने में सहायक : बालक के वर्तमान व्यवहार और विकास के आधार पर उसके भविष्य के व्यवहार व व्यक्तित्व की संभावनाओं का आकलन किया जा सकता है।
- बाल व्यवहार का मार्गान्तरिकरण व नियंत्रण में सहायक : बालक के व्यवहार को सकारात्मक दिशा में मोड़ने तथा अनुशासित करने के लिए उसके विकास का ज्ञान आवश्यक है।

बाल विकास के क्षेत्र

- बाल विकास की विभिन्न अवस्थाओं का अध्ययन : शैशावस्था, बाल्यावस्था, किशोरावस्था आदि प्रत्येक अवस्था के शारीरिक, मानसिक, सामाजिक व संवेगात्मक विकास का अध्ययन।
- बाल विकास के विभिन्न पहलुओं का अध्ययन : शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, नैतिक, संवेगात्मक तथा भाषायी विकास आदि सभी पहलुओं की समग्र समझ।
- बालकों की विभिन्न असमान्यताओं का अध्ययन : शारीरिक, मानसिक, सामाजिक एवं व्यवहारिक विकृतियों या समस्याओं जैसे – मंद बुद्धिता, अंधापन, श्रवण बाधा, व्यवहार विकार आदि का विश्लेषण।

- **मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान का अध्ययन :** मानसिक संतुलन, तनाव प्रबंधन, समायोजन क्षमता, तथा सकारात्मक सोच आदि का अध्ययन।
- **बालकों की विभिन्न मानसिक प्रक्रियाओं का अध्ययन :** अनुभूति, सृति, कल्पना, संवेग, अभिप्रेरणा, निर्णय, सोच आदि मानसिक क्रियाओं की प्रक्रिया का विश्लेषण।
- **बालकों की रुचियों का अध्ययन :** बालकों की व्यक्तिगत पसंद-नापसंद, झुकाव एवं अभिरुचियों का अध्ययन, जिससे उनकी क्षमताओं का विकास संभव हो।
- **बालकों की वैयक्तिक भिन्नताओं का अध्ययन :** बुद्धि, अभिरुचि, अभिक्षमता, स्वभाव, सीखने की गति आदि में पाई जाने वाली भिन्नताओं का मूल्यांकन।
- **बालकों के व्यक्तित्व का मूल्यांकन :** बालकों के व्यक्तित्व के विभिन्न आयामों जैसे – आत्मविश्वास, नेतृत्व, समायोजन, व्यवहार आदि का निरीक्षण एवं परीक्षण।

बाल विकास के अध्ययन का महत्व

- **विकासात्मक क्रियाओं का ज्ञान प्राप्त होना :** बाल विकास के अध्ययन से यह ज्ञात होता है कि बालकों में शारीरिक, मानसिक, सामाजिक, भाषायी और संवेगात्मक विकास कैसे क्रमिक रूप से होता है। इससे शिक्षकों, अभिभावकों और शिक्षाविदों को यह समझने में सहायता मिलती है कि किस अवस्था में बालक को किस प्रकार की सहायता और गतिविधियों की आवश्यकता है।
- **बाल पोषण विधियों का ज्ञान :** शारीरिक विकास के साथ-साथ संतुलित पोषण भी बालक की वृद्धि और स्वास्थ्य के लिए आवश्यक है। बाल विकास के अध्ययन से बालकों की आयु, विकास स्तर और आवश्यकताओं के अनुसार उचित पोषण पद्धतियों की जानकारी प्राप्त होती है, जिससे शारीरिक दुर्बलताओं और बीमारियों से बचाव संभव हो पाता है।

- **व्यक्तिगत भिन्नताओं की जानकारी प्राप्त होना :** हर बालक अलग होता है – उसकी रुचियाँ, क्षमताएँ, सीखने की गति और सोचने की शैली भिन्न होती है। बाल विकास का अध्ययन हमें इन वैयक्तिक भिन्नताओं को पहचाने और स्वीकार करने में सहायता करता है, जिससे हर बालक को उसकी आवश्यकतानुसार शिक्षा एवं मार्गदर्शन प्रदान किया जा सके।
- **विकास की अवस्थाओं का ज्ञान :** बाल विकास अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि बालकों का विकास विभिन्न अवस्थाओं में कैसे होता है – जैसे शैशवावस्था, बाल्यावस्था, किशोरावस्था आदि। प्रत्येक अवस्था के भिन्न-भिन्न लक्षणों और आवश्यकताओं को समझकर अभिभावक और शिक्षक बालकों की उचित देखभाल कर सकते हैं।
- **बालकों के प्रशिक्षण और शिक्षण में उपयोगी :** बाल विकास का ज्ञान शिक्षक को यह निर्णय लेने में सहायता होता है कि किस उम्र में कौन-सी विषयवस्तु, शैक्षिक विधि और गतिविधियाँ उपयुक्त होंगी। यह शिक्षण को अधिक प्रभावशाली, वैज्ञानिक और बालक-केंद्रित बनाता है।
- **बालकों के व्यक्तित्व निर्माण में सहायता :** एक संतुलित और सकारात्मक व्यक्तित्व का निर्माण बाल्यावस्था में ही प्रारम्भ होता है। बाल विकास के अध्ययन से यह समझने में मदद मिलती है कि कौन-से कारक व्यक्तित्व को प्रभावित करते हैं और किस प्रकार उचित वातावरण, प्रशिक्षण, अनुशासन और अभिप्रेरणा द्वारा बालक के व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास संभव है।

विकास की अवस्थाएँ

- **शैशवावस्था -** जन्म से 5 वर्ष
 - **बाल्यावस्था -** 6 वर्ष से 12 वर्ष
 - **किशोरावस्था -** 13 वर्ष से 18 वर्ष
 - **प्रौढावस्था -** 19 वर्ष के बाद
- जेम्स ट्रैवर "जन्म से परिपक्वता तक विकसित हो रहे मानव का अध्ययन किया जाता है।"

कॉलसैनिक के अनुसार

- शैशव - जन्म से 3/4 सप्ताह
- उत्तर शैशव - 2 वर्ष तक
- पूर्व बाल्यावस्था - 2 से 6 वर्ष
- मध्य बाल्यावस्था - 6 से 9 वर्ष
- उत्तर बाल्यावस्था - 9 से 12 वर्ष
- किशोरावस्था - 12 से 21 वर्ष

हरलॉक के अनुसार विकास की अवस्थाएँ

- गर्भावस्था - गर्भधारण से जन्म तक
- शैश्वावस्था - जन्म से 14 दिन तक
- बचपनावस्था - 14 दिन से 2 वर्ष तक
- पूर्व बाल्यावस्था - 3 से 6 वर्ष तक
- उत्तर बाल्यावस्था - 7 वर्ष से 12 वर्ष तक
- वयः संधि - 12 से 14 वर्ष
- पूर्व किशोरावस्था - 13-14 वर्ष से 17 वर्ष तक
- उत्तर किशोरावस्था - 18 से 21 वर्ष
- प्रौढावस्था - 21 से 40 वर्ष
- मध्यावस्था - 41 से 60 वर्ष
- वृद्धावस्था - 60 के बाद

रोस के अनुसार

- शैश्वावस्था - 1 से 3 वर्ष
- पूर्व बाल्यावस्था - 3 से 6 वर्ष
- उत्तर बाल्यावस्था - 6 से 12 वर्ष
- किशोरावस्था - 12 से 18 वर्ष तक

विभिन्न अवस्थाओं का सामान्य वर्णन

- **गर्भकालीन अवस्था :** यह गर्भधारण से जन्म तक की अवस्था है। इस अवस्था की विकास प्रक्रियाओं के अध्ययन की सुविधा की दृष्टि से इस अवस्था की तीन उप अवस्थाएँ हैं -
 - ✓ **बीजावस्था :** यह गर्भधारण से दो सप्ताह की अवस्था है।

✓ **भ्रूणावस्था :** यह दो सप्ताह से 8 सप्ताह तक की प्रक्रिया हैं। इस अवस्था का जीव भ्रूण कहलाता है। इसमें जीव के मुख्य अंगों का निर्माण होता है।

✓ **गर्भावस्था शिशु की अवस्था :** यह आठ सप्ताह से जन्म से पूर्व तक की अवस्था है।

➤ **शैश्वावस्था :** यह जन्म से 14 दिनों की अवस्था है। इस अवस्था में शिशु को नवजात शिशु की संज्ञा दी जाती है।

➤ **बचपनावस्था :** यह अवस्था से 2 सप्ताह से 2 वर्ष तक की अवस्था है। इस अवस्था में बालक पूर्णतः असहाय होता है और अपनी आवश्यकताओं के लिए दूसरों पर निर्भर होता है, इस अवस्था में विकास की गति तीव्र होती है।

➤ **बाल्यावस्था :** यह अवस्था तीन वर्ष के प्रारम्भ से तेरह - चौदह वर्ष तक की अवस्था है। इस अवस्था को अध्ययन की सुविधा हेतु दो भागों में बांटा गया है -

✓ **पूर्व बाल्यावस्था :**

✓ **उत्तर बाल्यावस्था**

✓ **बालक** में नवीन प्रवृत्तियाँ, जिज्ञासा, सृजनशीलता, अनुकरण इत्यादि का उदय होने लगता है।

✓ **बालक प्रथम बार अकेले सामाजिक वातावरण में प्रवेश करता है** और विद्यालय जाना प्रारंभ करता है।

➤ **वय संधि या पूर्व किशोरावस्था :** उत्तर बाल्यावस्था और किशोरावस्था के मध्य का भाग। जिसमें दोनों अवस्था के दो - दो वर्ष शामिल होते हैं। इस कारण से यह अवस्था को मिश्रित अवस्था कहा जाता है। इस अवस्था में यौन अंगों का विकास होता है। शारीरिक एवं मानसिक विकास की गति इस अवस्था में बाल्यावस्था से तीव्र होती है।

- **किशोरावस्था :** बाल्य जीवन की यह अंतिम अवस्था है। यह अवस्था 14-15 वर्ष से 21 वर्ष तक की अवस्था है।
 - ✓ पूर्व किशोरावस्था - 17 वर्ष तक की अवस्था
 - ✓ उत्तर किशोरावस्था - 17 वर्ष से 21 वर्ष तक की अवस्था
 - ✓ नोट : इस अवस्था को कुछ विद्वान् स्वर्ण आयु भी कहते हैं। इस अवस्था में विपरीत सेक्स के लोगों के प्रति आकर्षण बढ़ जाता है तथा सामाजिकता और कामुकता इस अवस्था की दो मुख्य विशेषताएँ हैं।
- **प्रौढ़ावस्था :** यह 21 वर्ष से 40 वर्ष तक अवस्था हैं। इसमें कर्तव्यों और उत्तरदायित्वों का निर्वाह कर सकता है। जन जीवन की विभिन्न परिस्थितियों में उसका स्वस्थ समायोजन हो और वह उपलब्धियों को प्राप्त कर सके।
- **मध्यवस्था, उत्तर मध्यवस्था :** यह अवस्था 41 से 64 वर्ष तक की अवस्था है। इस अवस्था में व्यक्ति के अंदर शारीरिक व मानसिक परिवर्तन होते हैं। इस समय व्यक्ति सुखमय और सम्मान जनक जीवन की कमाना करता है।
- **वृद्धावस्था :** यह अवस्था 65 वर्ष के आगे की अवस्था कहलाती है। यह जीवन की अंतिम अवस्था के रूप में जानी जाती है। इस अवस्था में यादाश्त कमजोर और शारीरिक एवं मानसिक क्षमताओं में कमी आने लगती है।

शैशवावस्था

- 0 से 5 वर्ष/जन्म से 5 वर्ष

थार्नडाइक "3 से 6 वर्ष की आयु का बालक प्रायः अर्द्ध स्वप्न की अवस्था में रहते हैं।"

फ्रायड "व्यक्ति को जो कुछ भी बनना होता है वह चार-पाँच वर्षों में बन जाता है।"

स्ट्रेंग "जीवन के प्रथम दो वर्षों में बालक अपने भावी जीवन का शिलान्यास करता है।"

गुड एनफ "व्यक्ति का जितना विकास होता है। उसका आधा 3 वर्ष में हो जाता है।"

वेलेन्टाइन, "शैशवावस्था सीखने का आदर्शकाल है।"

गैसल, "प्रारम्भिक 6 वर्षों का विकास बाद के 12 वर्ष से भी दुगुना विकास होता है।"

ब्रिजेज, "दो वर्ष की उम्र तक बालक में सभी संवेगों का विकास हो जाता है।"

क्रो एंड क्रो "20 वीं शताब्दी को बालक की शताब्दी कहा।"

रूसो, "बालक के हाथ पैर व आँख उसके प्राथमिक शिक्षक होते हैं।"

ड्राइडेन, "सर्वप्रथम हम हमारी आदतों का निर्माण करते बाद में आदतें हमारा निर्माण करती है।"

शैशवावस्था की विशेषताएँ

- शारीरिक विकास की तीव्रता
- मानसिक विकास की तीव्रता
- कल्पना की सजीवता
- आत्म प्रेम / स्वमोह की अवस्था
- नैतिक गुणों का विकास
- मूल प्रवृत्तियों पर आधारित व्यवहार
- अनुकरण द्वारा सीखने की प्रक्रिया
- जिज्ञासा प्रवृत्ति
- दोहराने की प्रवृत्ति
- अन्तर्मुखी व्यक्तित्व
- संवेगों का प्रदर्शन
- काम शक्ति का प्रदर्शन
- खिलौनों में सर्वाधिक रूचि
- प्रिय लगने वाली अवस्था
- प्रारम्भिक विद्यालय की पूर्व तैयारी की आयु
- भाषाई कौशलों का विकास

शैशवावस्था के उपनाम

- सीखने का आदर्श काल - वेलेन्टाइन
- जीवन का महत्वपूर्ण काल
- भावी जीवन की आधारशीला
- अनुकरण द्वारा सीखने की अवस्था
- खिलौनों की आयु
- पूर्व प्राथमिक विद्यालय की आयु
- पराधीनता की अवस्था

- अतार्किक चिन्तन की अवस्था
- खतरनाक काल
- बक्की अवस्था
- बादशाह की अवस्था
- सीखने का स्वर्ण काल अवस्था
- नामकरण विस्फोट की अवस्था
- कल्पना जगत में विचरण की अवस्था

नवजात शिशुओं में प्रमुख प्रतिवर्ती अवस्थाएँ

प्रतिवर्ती	विवरण	विकासात्मक क्रम
रूटिंग अवस्था	गाल को छूने पर सिर को घुमाना एवं मुख खोलना।	3 से 6 माह में विलुप्त हो जाती है।
मोरों अवस्था	यदि तीव्र शोर होता है तो बच्चा अपनी कमर को झटका देता है, हाथ-पैर फैला लेता है और फिर सिकोड़कर अपनी छाती के पास लाता है जैसे वह कुछ पकड़ रहा हो।	3 से 7 माह में विलुप्त हो जाती है (यह स्थिति शोर के प्रति अनुक्रिया को दर्शाती है)।
पकड़ना	बच्चे की हथेली को स्पर्श करने अथवा कोई वस्तु रखने पर यदि वह वस्तु पकड़ लेता है तो उसकी उंगलियाँ अत्यंत दृढ़ता से लिपट जाती हैं।	3 से 4 माह में विलुप्त हो जाती है (इसके पश्चात यह स्वैच्छिक हो जाती है)।
बेबिन्सकी अवस्था	यदि बच्चे के पैर के तलवे को ठोका जाता है तो पैर की उंगलियाँ ऊपर की ओर जाती हैं और फिर आगे की ओर मुड़ जाती हैं।	8 से 12 माह में विलुप्त हो जाती है।

बाल्यावस्था-(6 से 12 वर्ष तक)

कोल एवं ब्रूस, "बाल्यावस्था जीवन का अनोखा काल है।"

रास, "बाल्यावस्था को मिथ्या या छव्व परिपक्वता का काल कहा है।"

स्ट्रेंग"ऐसा शायद ही कोई खेल हो जिसे बालक 10 वर्ष की उम्र में ना खेला हो।"

किल पेट्रिक "बाल्यावस्था को प्रतिद्रुन्दात्मक

समाजीकरण का काल कहा है।"

बर्ट "बाल्यावस्था में भ्रमण व साहसिक कार्य की प्रवृत्ति में वृद्धि होती है।"

ब्लेयर, जोन्स, "शैक्षिक दृष्टिकोण से बाल्यावस्था से अधिक जीवन में कोई महत्वपूर्ण अवस्था नहीं है।"

एटकिन्सन"बाल्यावस्था जीवन का सबसे आनन्ददायक काल है।"

बाल्यावस्था की विशेषताएँ

- शारीरिक विकास में स्थिरता
- मानसिक विकास में स्थिरता
- वास्तविक जगत से संबंधित
- समूह भावना का विकास
- नैतिक गुणों का विकास
- संग्रह करने की प्रवृत्ति
- रुचियों में परिवर्तन
- बहिर्मुखी व्यक्तित्व
- वैचारिक क्रिया की अवस्था
- नये कौशलों एवं क्षमताओं के विकास की वृद्धि
- स्थूल संक्रियात्मक अवस्था
- अदला-बदली की भावना
- हीन भावना का शिकार
- पक्षपात की भावना
- परिश्रम हीनता
- चोरी करना, झूठ बोलना, झगड़ा करना आदि
- जिज्ञासा की प्रबलता
- निरुद्देश्य भ्रमण की प्रवृत्ति
- काम प्रवृत्ति की न्यूनता

बाल्यावस्था के उपनाम

- मूर्त चिंतन की अवस्था
- प्राथमिक विद्यालय की अवस्था
- शैक्षणिक दृष्टि से महत्वपूर्ण काल
- टोली / समूह की अवस्था
- वस्तु संग्रहण की अवस्था
- मिथ्या परिपक्वता का काल
- छद्म परिपक्वता का काल
- नेता बनने की इच्छा
- वैचारिक अवस्था का काल
- संग्रह करने की प्रवृत्ति
- गंदी आयु (Dirty Age)
- सारस अवस्था

किशोरावस्था - (12 से 18 वर्ष तक)

- किशोरावस्था अंग्रेजी के Adolescence शब्द का हिन्दी रूपान्तरण है। जिसका अर्थ "परिपक्वता" होता है। यह शब्द लैटिन भाषा का है।
- 1904 में स्टेनले हॉल ने "Adolescence" नामक पुस्तक लिखी। स्टेनले हॉल को किशोरावस्था का जनक माना जाता है।
- ✓ **त्वरित/आकस्मिक विकास का सिद्धान्त (स्टेनले हॉल) :** इस सिद्धान्त के अनुसार बालक-बालिकाओं में जो भी परिवर्तन होते हैं वे सब आकस्मिक होते हैं।
- ✓ **क्रमिक विकास का सिद्धान्त (थार्नडाइक) :** इस सिद्धान्त के अनुसार किशोरावस्था में जो भी परिवर्तन होते हैं वे अचानक न होकर एक क्रमिक रूप में होता है।

वेलेंटाइन, "किशोरावस्था अपराध प्रवृत्ति के विकास का नाजुक समय है।"

रॉस/जॉस,

- "किशोरावस्था शैशवावस्था की पुनरावृत्ति है।"
- "किशोर समाज सेवा के आदर्शों का निर्माण व पोषण करते हैं।"

किलपैट्रीक, "किशोरावस्था जीवन का सबसे कठिन काल है।"

स्टेनले हॉल, "किशोरावस्था संघर्ष, तनाव, तूफान की अवस्था है।"

स्किनर, "किशोर को निर्णय का कोई अनुभव नहीं है।"

क्रो एंड क्रो, "किशोर ही वर्तमान की शक्ति व भावी शक्ति की आशा को प्रदर्शित करता है।"

एरिक्शन, "किशोरावस्था में किशोर स्वयं के व्यक्तित्व का स्पष्टीकरण चाहते हैं।"

किशोरावस्था की विशेषता

- दलभक्ति की अवस्था
- सामाजिक स्वीकृति की अवस्था
- सुनहरी अवस्था
- उथल-पुथल की अवस्था
- तार्किक चिंतन की अवस्था
- आत्म सम्मान एवं आत्म स्वीकृति की अवस्था
- व्यक्तिगत एवं घनिष्ठ मित्रता की अवस्था
- प्रबल दबाव, तनाव की अवस्था
- संवेगात्मक परिवर्तन की अवस्था
- द्रुत एवं तीव्र विकास की अवस्था
- शारीरिक व मानसिक विकास में तीव्रता (बिग एवं हंट)
- ईश्वर व धर्म में विश्वास
- समाजसेवा की भावना
- अपराधि प्रवृत्ति का विकास
- स्थिरता एवं समायोजन का अभाव
- व्यवहार में भिन्नता
- चहुमुखी विकास

- वीर पूजा
- विषमलिंगी सद्व्यवहना
- दिवास्वप्न की अधिकता
- प्रतियोगी भावना एवं नेतृत्व करना
- अनैतिक कार्य एवं आत्महत्या करना

किशोरावस्था के उपनाम

- जीवन की बसन्त ऋतु
- जीवन का स्वर्ण काल
- Teen Age
- समस्या समाधान की आयु
- संक्रमण की आयु
- जीवन का सबसे कठिन काल किलपैट्रिक
- देवदूत अवस्था
- वीर पूजा की प्रवृत्ति
- देशभक्ति की भावना
- दबाव, तूफान व संघर्ष की अवस्था
- सर्वाधिक काम प्रवृत्ति
- समायोजन का अभाव

विकास को प्रभावित करने वाले कारक

बालक का विकास एक सतत प्रक्रिया है, जो वंशानुक्रम और वातावरण के परस्पर प्रभाव से संचालित होता है। हालांकि, कुछ ऐसे विशेष कारक होते हैं जो इस प्रक्रिया को गति देते हैं अथवा उसे अवरुद्ध करने के कारक बनते हैं। ये कारक जन्मपूर्व अवस्था से लेकर बालक की समूची वृद्धि यात्रा को प्रभावित करते हैं। इन कारकों का विवरण निम्नलिखित है:

➤ पोषण

- ✓ पोषण किसी भी बालक के विकास में आधारभूत भूमिका निभाता है। गर्भकाल से लेकर किशोरावस्था तक उत्तम पोषण बालक के शारीरिक और मानसिक विकास हेतु अनिवार्य होता है। संतुलित आहार में समुचित मात्रा में प्रोटीन, वसा, कार्बोहाइड्रेट, विटामिन तथा खनिज लवण की उपस्थिति आवश्यक होती है। यदि पोषण अपर्याप्त हो तो बालक की वृद्धि मंद हो जाती है, जिससे उसका सीखने, खेलने और सामाजिक समायोजन का स्तर प्रभावित होता है।

➤ बुद्धि

- ✓ बालक की बौद्धिक क्षमताएँ उसके संपूर्ण विकास को दिशा देती हैं। जिन बालकों में तीव्र बुद्धि पाई जाती है, वे न केवल तेजी से सीखते हैं बल्कि नई स्थितियों में जल्दी समायोजित भी होते हैं। टर्मन ने स्पष्ट किया कि प्रखर बुद्धि वाले बालक 13वें माह में चलने और 11वें माह में बोलने लगते हैं जबकि मंद बुद्धि वाले बालकों में ये क्षमताएँ 30वें और 15वें माह में प्रकट होती हैं।

➤ यौन भेद

- ✓ लड़कियाँ और लड़के विकास की भिन्न गति से गुजरते हैं। जन्म के समय लड़के कुछ अधिक लम्बे होते हैं, लेकिन किशोरावस्था में लड़कियाँ तेजी से वृद्धि करती हैं और वे लड़कों की तुलना में जल्दी परिपक्वता प्राप्त कर लेती हैं। यह भेद न केवल शारीरिक वरन् मानसिक विकास पर भी प्रभाव डालता है।

➤ अन्तःस्त्रावी ग्रन्थियाँ

- ✓ मानव शरीर में उपस्थित ग्रन्थियाँ जैसे थॉयरॉइड, पिट्यूट्री, गोनाड़स आदि हार्मोन स्त्रवित करती हैं जो शरीर के विविध कार्यों को नियंत्रित करते हैं। थॉयरॉक्सिन शारीरिक व मानसिक विकास में सहायक होता है। इन ग्रन्थियों की अधिक या कम क्रियाशीलता से विकास असामान्य हो सकता है। उदाहरणस्वरूप, थाइमस की अति क्रियाशीलता से बचपन के लक्षण लंबे समय तक बने रहते हैं।

➤ प्रजातीय भिन्नता

- ✓ कुछ वैज्ञानिकों का मानना है कि भिन्न प्रजातियों के लोगों में न केवल शारीरिक बनावट, वर्ण आदि में भिन्नता होती है, बल्कि मानसिक योग्यताओं में भी। हालांकि हरलोक जैसे विद्वान इस मत को स्वीकार नहीं करते।

➤ रोग एवं चोट

- ✓ गर्भकालीन अवस्थाओं में उत्पन्न बीमारियाँ या जन्म के बाद बालक को लगी चोटें उसके विकास को अवरुद्ध कर सकती हैं। शारीरिक रोगों के साथ-साथ मानसिक आघात भी बालक की सामाजिकता, आत्मविश्वास और समझने की क्षमता को प्रभावित करते हैं।

➤ परिवारिक वातावरण

- ✓ परिवार बालक का पहला सामाजिक संस्थान होता है। माता-पिता के आपसी संबंध, पालन-पोषण की शैली, बच्चों के प्रति व्यवहार, परिवार का आकार, सभी कुछ बालक के व्यक्तित्व निर्माण में भूमिका निभाते हैं। जिस परिवार में संवाद, सहयोग और स्नेह का वातावरण होता है, वहाँ बालक का सर्वांगीण विकास स्वाभाविक रूप से होता है।

विकास को प्रभावित करने वाले परिवारिक कारक

➤ अभिभावकों की अभिवृत्तियाँ

- ✓ अभिभावकों के व्यवहार से बालकों का मानसिक स्वरूप तैयार होता है। अति-संरक्षण बालकों को निर्भर बना देता है, जबकि तिरस्कार उन्हें आत्महीनता व आक्रामकता की ओर ले जाता है। कठोर अभिभावकत्व के कारण बालकों में शर्मिलापन, हीन भावना व अनिर्णय की प्रवृत्ति देखी जाती है।

➤ परिवार का आकार

- ✓ मध्यम आकार का परिवार बालक के सर्वांगीण विकास हेतु उपयुक्त माना जाता है। छोटे परिवारों में संसाधनों की उपलब्धता अधिक होती है, जबकि बड़े परिवारों में प्रतिस्पर्धा और उपेक्षा की संभावना अधिक रहती है।

➤ दूटे हुए परिवार

- ✓ जब माता या पिता में से कोई अनुपस्थित हो, मृत्यु हो या तलाक की स्थिति हो, तो बालक असुरक्षा और मानसिक अस्थिरता से ग्रसित हो सकता है। आर्थिक दबाव और भावनात्मक कमी उसका विकास अवरुद्ध कर सकती है।

➤ माता-पिता का व्यवसाय

- ✓ पिता का सामाजिक पद और माता की व्यस्तता बालक के आत्मबोध, सामाजिक व्यवहार और अभिव्यक्ति को प्रभावित करती है। माँ के कार्यशील होने पर छोटे बच्चों को अकेलेपन की समस्या झेलनी पड़ सकती है।

➤ सामाजिक-आर्थिक स्तर

- ✓ परिवार की आर्थिक स्थिति बालक की शिक्षा, स्वास्थ्य, पोषण और मानसिक स्थिरता पर सीधा प्रभाव डालती है। निम्न आर्थिक स्थिति वाले परिवारों के बालकों में हीन भावना का अनुभव आमतौर पर देखा गया है।

➤ अभिभावकों का पक्षपात

- ✓ यदि किसी एक बालक को विशेष स्नेह और दूसरे को उपेक्षा मिलती है, तो इससे उपेक्षित बालक में ईर्ष्या, क्रोध और असंतुलन की प्रवृत्तियाँ पनपती हैं।

➤ जन्म क्रम

- ✓ प्रथम संतान को अधिक अवसर व संसाधन मिलते हैं। इससे उनमें आत्मविश्वास व उत्तरदायित्व का स्तर अधिक होता है जबकि बाद में जन्मे बालकों में उपेक्षा की भावना पाई जा सकती है।

विकास को प्रभावित करने वाले विद्यालय संबंधी कारक

➤ विद्यालय का वातावरण

- ✓ विद्यालय केवल शैक्षिक संस्था नहीं बल्कि व्यक्तित्व निर्माण का केंद्र होता है। बालक की रुचियाँ, मूल्यबोध और सामाजिक व्यवहार का आधार विद्यालय में ही पड़ता है।

➤ नर्सरी और प्राथमिक शिक्षा

- ✓ नर्सरी शिक्षा बालकों में आत्मविश्वास, सामाजिक समायोजन और सृजनात्मकता को प्रारम्भिक अवस्था में ही विकसित करती है। प्रारम्भिक विद्यालय में समायोजन उन्हीं बालकों का सरल होता है, जिन्हें पहले अच्छा पारिवारिक वातावरण मिला होता है।

➤ कक्षा का वातावरण

- ✓ सहयोगात्मक और प्रजातांत्रिक कक्षा वातावरण में बालकों में मित्रता, नेतृत्व और सहयोग की भावना का विकास होता है। जबकि कठोर या अराजक कक्षाओं में डर, विद्रोह और निष्क्रियता देखी जाती है।

➤ अध्यापक-विद्यार्थी संबंध

- ✓ अध्यापक का व्यवहार बालकों पर गहरा प्रभाव डालता है। स्नेहशील शिक्षक प्रेरणादायक होते हैं

जबकि कठोर व्यवहार बालकों में भय, विद्रोह या आत्महीनता की भावना को जन्म दे सकता है।

➤ विद्यालय का अनुशासन

- ✓ प्रजातांत्रिक अनुशासन बालकों में आत्मसंयम, आत्मविश्वास और उत्तरदायित्व की भावना को बढ़ाता है। तानाशाही अनुशासन से वे संकोची, सशंकित और असहयोगी बन सकते हैं।

➤ नैतिक और सामाजिक विकास में विद्यालय की भूमिका

- ✓ विद्यालय में बालक सामाजिक मूल्यों को व्यवहारिक रूप से सीखता है—जैसे सहयोग, उत्तरदायित्व, आत्मनियंत्रण, नेतृत्व, न्याय और सेवा। ये गुण उसकी आगे की सामाजिक यात्रा को सुगम बनाते हैं।

बाल विकास के सिद्धांत

मनोसामाजिक विकास सिद्धान्त (इरिक्सन)

- इरिक्सन ने अपनी पुस्तक "Childhood and Society" में बालक का सामाजिक विकास महत्वपूर्ण माना है।
- इरिक्सन के सिद्धान्त में व्यक्तिगत, सांवेगिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक विकास को समन्वित रूप से प्रस्तुत किया।
- इन्होंने व्यक्तित्व विकास में व्यक्ति की सामाजिक अनुभूतियों के महत्व पर बल दिया।
- व्यक्तित्व विकास में इड के स्थान पर अहम को अधिक महत्व दिया।
- मनोसामाजिक सिद्धान्त निम्न पाँच तथ्यों पर आधारित है
 - ✓ विकास की प्रत्येक अवस्था में एक मनोसामाजिक चुनौती होती है जिसे संकट कहा जाता है। जो इसका समाधान कर लेता है उसका विकास उतना ही अच्छा होता है।
 - ✓ विकास विभिन्न अवस्थाओं में होकर गुजरता है।
 - ✓ सभी की मौलिक आवश्यकताएँ एक समान होती हैं।
 - ✓ विकास की विभिन्न अवस्थाओं में व्यक्ति की प्रेरणा का अन्तर होता है।
 - ✓ व्यक्ति में आत्म और स्व का विकास इनके प्रति की गयी अनुक्रिया का परिणाम है।
- इस सिद्धान्त को जीवन अवधि विकास सिद्धान्त भी कहा जाता है।

- इरिक्सन ने अपने सिद्धान्त को आठ अवस्थाओं में बँटा है।
 - ✓ विश्वास बनाम अविश्वास — जन्म से 1 वर्ष
 - ✓ स्वायत बनाम लज्जा एवं शक — 1 से 3 वर्ष
 - ✓ पहल बनाम दोषीत्व — 3 से 5 वर्ष
 - ✓ परिश्रम बनाम हीनता — 6 से 12 वर्ष
 - ✓ पहचान बनाम संशयिता — 12 से 18 वर्ष
 - ✓ घनिष्ठता बनाम अलगाव — 18 से 35 वर्ष
 - ✓ जननात्मक बनाम स्थिरता — 36 से 55 वर्ष
 - ✓ सम्पूर्णता बनाम निराशा — 55/60 वर्ष से अधिक
- **विश्वास बनाम अविश्वास (जन्म से 2 वर्ष)** : इस अवस्था में बालक को माता-पिता का प्यार व स्वयत्तता मिलती है तो विश्वास पैदा होता है और अगर उसको परिवार में स्वतंत्रता एवं प्यार नहीं मिलता है तो उसमें अविश्वास पैदा हो जाता है। दोनों ही स्थिति में बालक संकट पैदा करती है। यदि बालक इस समस्या का सफलतापूर्वक समाधान कर लेता है तो उसमें एक मनोसामाजिक स्थिति उत्पन्न हो जाती है जिसे विश्वास कहा जाता है।
- **स्वायत बनाम लज्जा व शक (2-3 वर्ष)** : जिन बालकों पर उनके परिवार के सदस्यों को विश्वास हो जाता है तो वे उनके व्यवहार को मान्यता दे देते हैं। जिनसे उनमें स्वतन्त्रता एवं स्वयत्तता का गुण विकसित हो जाता है और जिन बालकों को परिवार में महत्व नहीं दिया जाता उनमें लज्जा का अनुभव करते हैं। लज्जा के कारण अपने कार्यों पर शक करने लगते हैं। इन दोनों का समाधान कर लेने पर उनमें इच्छाशक्ति का गुण विकसित होता है।

- **पहल बनाम दोष (3-5 वर्ष) :** प्रारम्भिक बाल्यावस्था होती है। इसे प्री स्कूल की अवस्था भी कहते हैं। इस अवस्था में बालक बाह्य वातावरण में नयी-नयी उत्सुकता प्रदर्शित करता है। नयी-नयी खोज करता है। माता-पिता को ऐसे गुणों की सराहना करनी चाहिए। जो माता-पिता पहल की आलोचना करते हैं तो उनमें दोष उत्पन्न हो जाता है। इन दोनों का सफलतापूर्वक समाधान कर लेने से उनमें उद्देश्य नामक मनोसामाजिक गुण पैदा हो जाता है।
- **परिश्रम बनाम हीनता (5-12 वर्ष) :** यह उत्तर बाल्यावस्था है। इसमें बालक नवीन ज्ञान एवं सृजन एवं बौद्धिक कौशल को प्राप्त करने का प्रयास करता है। जिससे बालकों में परिश्रम का भाव विकसित होता है और असफल होने पर हीनता का शिकार हो जाते हैं। इसका समाधान कर लेने पर उनमें उद्देश्य का गुण विकसित हो जाता है।
- **पहचान बनाम संभ्रान्ति (12-18 वर्ष) :** यह किशोरावस्था का काल होता है। इस अवस्था कर्तव्य परायणता नामक गुण विकसित होता है।
- **घनिष्ठता बनाम अलगाव (18-40 वर्ष) :** इस अवस्था में "प्यार" नामक गुण विकसित होता है। इससे दूसरों के प्रति ईमानदारी एवं वफादारी करने का गुण विकसित होता है।
- **जननात्मक बनाम स्थिरता (40-65 वर्ष) :** यह वयस्कावस्था है। इसमें देखभाल नामक गुण विकसित होता है।
- **सम्पूर्णता बनाम निराशा (65+ उम्र) :** यह मनोसामाजिक विकास सिद्धान्त की अन्तिम अवस्था है। इसमें परिपक्वता का गुण विकसित होता है। इस अवस्था में नैराश्य का भाव होता है।

मनोसामाजिक सिद्धान्त का शिक्षा में उपयोग

- प्राथमिक विद्यालय के बालकों में परिश्रम का गुण विकसित किया जाना चाहिए।
- इस सिद्धान्त के अनुसार छोटे बच्चों को पहल का बढ़ावा देना चाहिए।
- बालकों में पहचान विकसित करनी चाहिए।